इकाई 5 संवृद्धि तथा विकास के प्रमुख निर्धारक

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 आर्थिक संवृद्धि

5.3 आर्थिक विकास

5.4 आर्थिक विकास के निर्धारक तत्त्व

- 5.4.1 पूँजी निर्माण
- 5.4.2 पूँजी-उत्पादन अनुपात
- 5.4.3 व्यावसायिक ढाँचा
- 5.4.4 जनसंख्या वृद्धि

5.5 भारत का अनुभव

5.6 सारांश

5.7 शब्दावली

5.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा संकेत

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- आर्थिक संवृद्धि तथा आर्थिक विकास की अवधारणाएँ समझ सकेंगे;
- दोनों के बीच अंतर बता सकेंगे;
- आर्थिक विकास के निर्धारक तत्त्वों की पहचान कर सकेंगे; तथा
- संवृद्धि तथा विकास में भारत के प्रदर्शन का मूल्यांकन कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

तेज आर्थिक संवृद्धि (economic growth) आज की माँग है। 1950 के दशक के प्रारंभ में भी ऐसा ही कुछ था। लेकिन 1960 के दशक के मध्य तक आर्थिक विकास (economic development) की अवधारणा ने जोर पकड़ा। यह वह समय था जब यह महसूस किया जा रहा था कि विकासशील देशों की अधिकतर जनसंख्या को संवृद्धि प्रक्रिया से कोई विशेष लाभ नहीं पहुँच रहा है। लेकिन अब फिर आर्थिक विकास की अपेक्षा आर्थिक संवृद्धि पर अधिक जोर दिया जा रहा है।

5.2 आर्थिक संवृद्धि

'संवृद्धि' तथा 'विकास' की अवधारणाओं का अर्थ आपने इकाई-2 में पढ़ा। इसी इकाई में आर्थिक संवृद्धि का अर्थ भी समझाया गया था। आर्थिक संवृद्धि उस समय होती है जब लोग साधनों को अधिक लाभदायक ढंग से प्रयोग में लाते हैं। अर्थव्यवस्था में उत्पादन की हम अपने रसोईघर से तुलना कर सकते हैं। रसोई में व्यंजन बनाने के लिए हम विधि के अनुसार विभिन्न प्रकार के पदार्थ मिलाते हैं। हम क्या व्यंजन बना सकते हैं। यह

इस बात पर निर्भर होता है कि इसको बनाने की विधियाँ कितनी हैं और पदार्थ कितने हैं। इसी प्रकार वस्तुओं व सेवाओं का उत्पादन इस बात पर निर्भर होता है कि साधन कितने उपलब्ध हैं और इन्हें प्रयोग में लाने की कौन-कौन सी प्रौद्योगिकी में परिवर्तन आता है तो उत्पादन भी बढ़ेगा। उत्पादन स्तर में वृद्धि की इस प्रक्रिया को आर्थिक संवृद्धि कहते हैं। संक्षेप में, आर्थिक संवृद्धि से अभिप्राय एक निश्चित अवधि के दौरान राष्ट्रीय उत्पादन (आय) या फिर प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय में वृद्धि है।

5.3 आर्थिक विकास

आर्थिक संवृद्धि की तुलना में आर्थिक विकास एक विस्तृत अवधारणा है। यह एक जटिल अवधारणा है। इसकी कोई एक निश्चित परिभाषा कठिन है। विकास की परिभाषा सामाजिक परिवर्तन सहित आर्थिक विकास के रूप में की जाती है। सामाजिक परिवर्तन में बेहतर जीवन स्तर, आये तथा सम्पत्ति का समान वितरण, उत्पादक रोज़गार, सबके लिए सुविधाएँ, स्वास्थ्य तथा सफाई की पर्याप्त सुविधाएँ, सबके लिए शिक्षा आदि। इन सबके बारे में हमें ऐसे सामाजिक सूचकों से पता चलता है जैसे जन्म के समय जीवन प्रत्याशा (life expectancy), साक्षरता दर, जन्मदर व मृत्युदर, प्रति लाख जनसंख्या के पीछे हस्पताल व स्कूल, कृषि क्षेत्र में लगा श्रम शक्ति का अनुपात आदि।

विकास की परिभाषा करने के प्रयासों ने कुछ सामान्य परिभाषाओं को जन्म दिया है। इनमें से कुछ तो एक-दूसरे से भिन्न हैं विशेषतया इस बारे में कि विकास-सूचकांक में क्या-क्या शामिल हों। विकास का मुख्य तत्त्व यह है कि अर्थव्यवस्था में परिवर्तन की प्रक्रिया को ही आर्थिक विकास कहते हैं। ये कारक अप्रत्यक्ष रूप से आर्थिक विकास लाते हैं। इससे होने वाले लाभों से आनंद उठाना विकास कहलाता है। आर्थिक विकास आर्थिक संवृद्धि तथा विकास के बीच की स्थिति है।

आधारभूत तौर पर, आर्थिक विकास से अभिप्राय है अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में आर्थिक, और उच्च उत्पादन स्तर प्राप्त करना। उत्पादन स्तर प्रौद्योगिकी स्तर का फलन होता है। प्रौद्योगिकी का ऊँचा स्तर प्राप्त करने के लिए अर्थव्यवस्था को दो बातों की आवश्यकता होती है :

i) मशीनों, साज सामान, औज़ार आदि की मात्रा बढ़ाना (यानि भौतिक पूँजी निर्माण); और

ii) भौतिक पूँजी का उपयोग करने हेतु देश की जनसंख्या को बेहतर शिक्षा, सफाई, व स्वास्थ्य सुविधाएँ प्रदान कर श्रम शक्ति को प्रशिक्षण देना (यानि मानव पूँजी निर्माण)। संक्षेप में, आर्थिक विकास भौतिक व मानव पूँजी निर्माण की दर, बढ़ाने की एक प्रक्रिया है ताकि जनसंख्या का जीवन स्तर ऊपर उठ सकें। आर्थिक विकास की प्रक्रिया को लोगों की क्षमताएँ बढ़ाने तथा अवसर सुलभ कराने की प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है।

आर्थिक विकास के सूचकांक जीवन की गुणवत्ता को बहुत महत्त्व देते हैं। इनका भाव तीन प्रकार के परिवर्तनों पर आधारित होता है : जीवन प्रत्याशा, शिशु मृत्युदर तथा साक्षरता दर।

इन तीनों के बारे में विवेचन और मूल्यांकन से हमें इन्हें समझने में काफी सहायता मिलेगी। अगली इकाई में हमें सामाजिक परिवर्तन के माप के बारे में कुछ पता चलेगा। इन मापों के आधार पर एक अर्थव्यवस्था के प्रदर्शन का मूल्यांकन विभिन्न अवधियों में और विभिन्न देशों की तुलना में कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 1

1) आर्थिक 'संवृद्धि' की परिभाषा कीजिए? (तीन पंक्तियों में बताइए।)

.....

.....

.....

.....

.....

2) आर्थिक 'विकास' क्या होता है? (तीन पंक्तियों में लिखिए।)

.....

.....

.....

.....

.....

3) आर्थिक 'संवृद्धि' और आर्थिक 'विकास' के बीच क्या अंतर है?

.....

.....

.....

.....

.....

5.4 आर्थिक विकास के निर्धारक तत्त्व

आर्थिक संवृद्धि आर्थिक विकास का एक आवश्यक भाग है। जनसंख्या के जीवन स्तर में निरंतर वृद्धि लाना आय में वृद्धि पर निर्भर करता है। आर्थिक संवृद्धि के महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्त्वों को हम आर्थिक कारक भी कह सकते हैं।

एक खुली अर्थव्यवस्था में राष्ट्रीय आय की वृद्धि की दर दो बातों : (i) निवेश दर, तथा (ii) पूँजी-उत्पाद अनुपात पर निर्भर होती है : यानि,

$$\text{राष्ट्रीय आय की वृद्धि दर} = \frac{\text{निवेश-राष्ट्रीय आय अनुपात (I/Y)}}{\text{पूँजी-उत्पाद अनुपात (K/Y)}} = (I/Y) \,.\, (Y/K)$$

I = निवेश

Y = राष्ट्रीय आय अथवा उत्पादन

K = राष्ट्रीय पूँजी का स्टॉक

अन्य शब्दों में राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि की दर को तेज करने के लिए अर्थव्यवस्था में निम्नलिखित दो परिवर्तन आवश्यक होते हैं:

क) **निवेश दर (यानि निवेश-आय अनुपात) में वृद्धि लाना**

यदि अन्य बातें पूर्ववत् रहें, निवेश (यानि पूँजी निर्माण) की दर जितनी अधिक होगी, राष्ट्रीय आय में वृद्धि की दर भी उतनी ही अधिक होगी। एक अर्थव्यवस्था अपनी आय का जितना अधिक भाग निवेश में लगा पाएगी भविष्य आय में उतनी ही अधिक वृद्धि होगी।

ख) **पूँजी-उत्पाद अनुपात घटाना**

ऐसी शक्तियों को बढ़ावा देना जिससे पूँजीगत साधनों का कुशल प्रयोग करके पूँजी-उत्पाद अनुपात कम किया जा सकता है। कुशलता में वृद्धि पूँजी-उत्पाद अनुपात घटाती है। इससे हम कम पूँजी से अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।

5.4.1 पूँजी निर्माण

पूँजी से अभिप्राय मशीनों, औज़ारों व साज समान के स्टॉक तथा श्रमिकों की कुशलता में सुधार से है जिनका कि संवृद्धि की प्रक्रिया पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। एक अवधि के दौरान उसके स्टॉक में वृद्धि निर्माण कहलाती है। इसे निवेश भी कहते हैं।

आर्थिक संवृद्धि और विकास की प्रक्रिया में पूँजी निर्माण की एक निर्णायक भूमिका होती है। पूँजी निर्माण की दर बढ़ाना आवश्यक होता है ताकि देश में पूँजी का स्टॉक बढ़े और उससे आगे उत्पादन बढ़े। यही नहीं बल्कि पूँजी निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि कुशलता निर्माण में सुधार भी हो ताकि उत्पादन बढ़ाने हेतु मशीनों, साज समान आदि का कुशलता से प्रयोग हो।

योजना आयोग ने प्रथम पंचवर्षीय योजना में ये विचार व्यक्त किए हैं : एक समाज उत्पादन और भौतिक कल्याण का जो स्तर प्राप्त कर सकता है वह मुख्यत: उसके पूँजी के स्टॉक पर निर्भर होता है, यानि प्रति व्यक्ति भूमि की मात्रा, तथा मशीनों, भवनों, औजार व साज समान, कारखानों, रेल-इंजनों, सिंचाई सुविधाओं, विद्युत संस्थानों, संचार पर। पूँजी का स्टॉक जितना अधिक होगा, श्रम की उत्पादिकता भी उतनी ही अधिक होगी, अत: किए गए प्रयत्नों से वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन भी उतना ही अधिक होगा।

दूसरे देशों के अनुभव से यह पता चलता है कि आर्थिक संवृद्धि में गति लाने के लिए पूँजी निर्माण की दर का ऊँचा होना आवश्यक होता है। 1913 व 1939 के बीच जापान में पूँजी निर्माण की दर औसतन 16 से 20 प्रतिशत था। पूर्व सोवियत संघ की प्रथम पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय आय का एक चौथाई से लेकर एक तिहाई तक भाग शुद्ध पूँजी निर्माण में लगाने का लक्ष्य था। बाद की योजनाओं में यह कम कर दिया गया था और यह राष्ट्रीय आय के लगभग 20 प्रतिशत पर स्थित हो गया था। पूर्वी यूरोप के कुछ देशों, जैसे कि चैकोस्लोवाकिया व पोलेण्ड में सकल निवेश की दरें 20 से 25 प्रतिशत के बीच थीं। तेज संवृद्धि प्राप्त करने वाले अन्य देशों के अनुभव से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत को भी अपने पूँजी निर्माण की दर 20 से 25 प्रतिशत तक ले जानी होगी।

5.4.2 पूँजी-उत्पाद अनुपात

पूँजी-उत्पाद अनुपात आर्थिक विकास का एक और निर्धारक तत्त्व है। एक इकाई का उत्पादन करने के लिए पूँजी की जितनी इकाइयों की आवश्यकता होती है, उसे पूँजी-उत्पाद अनुपात कहते हैं। इससे हमें अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में पूँजी की उत्पादिता के बारे में मालूम पड़ता है। भारत जैसे विकासशील देश में जहाँ की पूँजी की कमी है, यह और भी आवश्यक हो जाता है कि पूँजी की उत्पादिता का एक प्रकार का संक्षिप्त विवरण होता है।

विभिन्न उद्योगों में और विभिन्न देशों में पूँजी-उत्पाद अनुपात अलग-अलग होते हैं। समय के साथ-साथ ये बदलते भी रहते हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अनुसार ऐसा कोई एक पूँजी-उत्पाद अनुपात नहीं होता जो सभी देशों में और सभी समयों पर एक समान होता हो, बहुत कुछ इस बात पर निर्भर होता है कि आर्थिक विकास किस चरण तक पहुँच गया है और आगे विस्तार का ठीक-ठीक स्वरूप क्या होगा।

उदाहरणत:, आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में जब एक देश आर्थिक बुनियादी सुविधाओं में, जैसे सिंचाई परियोजनाओं, जल-विद्युत परियोजनाओं, सड़कें, रेलवे आदि पर, भारी निवेश कर रहा होता है, तो उत्पादन में तुलनात्मक वृद्धि कम होती है। उद्योगों की ऐसी समस्या को अविभाज्यता की समस्या कहते हैं। इसका अर्थ यह है कि कारखाने का पैमाना एक विशिष्ट आकार का होना चाहिए चाहे वास्तव में, जैसा कि प्रारंभ में होता है, इससे एक बहुत छोटे से अंश के आकार के कारखाने की ही आवश्यकता हो। छोटे आकार के कारखाने का निर्माण करना या तो महँगा बैठता है या फिर संभव ही नहीं हो पाता। लेकिन जैसे-जैसे शक्ति क्षमता और परिवहन साज समान का पूर्ण उपयोग होने लगता है, पूँजी-उत्पाद अनुपात में अनुकूल परिवर्तन आने लगता है।

आधारभूत उद्योग, जैसे लोहा व इस्पात, मशीनी औज़ार, इंजीनियरिंग, धातु आदि उपभोक्ता वस्तु उद्योगों की अपेक्षा अधिक पूँजी-प्रधान होते हैं। परिणामस्वरूप, आर्थिक नींव रखे जाने के विकास के प्रारंभिक वर्षों में पूँजी-उत्पाद अनुपात प्रतिकूल रहता है। लेकिन जैसे ही विकास गति पकड़ता है और उपभोक्ता वस्तुओं का महत्त्व बढ़ता है, पूँजी में थोड़ी वृद्धि से ही उत्पादन में अधिक परिवर्तन आने शुरू हो जाते हैं। अन्य शब्दों में आर्थिक विकास की अवस्था तथा विभिन्न प्रकार के निवेश पूँजी उत्पाद अनुपात का निर्धारण करते हैं।

कुछ क्षेत्रों में (जैसे कृषि, लघु उद्योग आदि) पूँजी में थोड़ी वृद्धि से ही उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। इन्हें हम श्रम-प्रधान उद्योग या क्षेत्र कहते हैं। अन्य उद्योगों में, तुलनात्मक रूप से, अधिक पूँजी बढ़ाने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के तौर पर 1885 व 1915 के बीच जापान में बेहतर बीज, जल आपूर्ति में सुधार, फसलों की बीमारियों के नियंत्रण तथा उर्वरकों के उपयोग में केवल थोड़े निवेश द्वारा ही कृषि में श्रम उत्पादिता दोगुनी हो गई थी।

इसके अतिरिक्त, पूँजी-उत्पाद अनुपात दो अन्य बातों पर निर्भर होता है : (i) किस कुशलता से नए प्रकार का पूँजीगत साज-सामान प्रयोग में लाया जाता है, और (ii) आर्थिक विकास की उस अवस्था में प्रबंध व संगठन निपुणता कितनी है। निवेश कार्यक्रम का समन्वयन इस प्रकार का हो कि पूरक पड़े आर्थिक कार्य साथ-साथ विकसित हों ताकि पूँजी-उत्पादन अनुपात पर अनुकूल प्रभाव पड़े। अन्य शब्दों में, निवेश को प्रभावपूर्ण ढंग से प्रयोग में लाने की अर्थव्यवस्था की क्षमता भी पूँजी-उत्पाद अनुपात पर प्रभाव डालती है।

5.4.3 व्यावसायिक ढाँचा

कार्यकारी जनसंख्या का ढाँचा एक और कारक है जो आर्थिक विकास का निर्धारण भी करता है और आर्थिक विकास से निर्धारित भी होता है। विश्व का अनुभव यह बताता है कि आर्थिक विकास की प्रक्रिया के दौरान श्रमशक्ति प्राथमिक से द्वितीयक क्षेत्र को, और फिर सेवा क्षेत्र को हस्तांतरित होती है। उदाहरण के तौर पर 1870 व 1930 की अवधि में कृषि लगा श्रम का अनुपात संयुक्त राज्य अमरीका में 54 प्रतिशत से घटकर 23 प्रतिशत, फ्रांस में 43 प्रतिशत से घटकर 25 प्रतिशत तथा जापान में 80 प्रतिशत से घटकर 48 प्रतिशत हो गया था। इस परिवर्तन का अर्थ यह हुआ कि श्रम शक्ति कम उत्पादिता वाले प्राथमिक क्षेत्र से हटकर अधिक उत्पादिता वाले द्वितीयक व तृतीयक क्षेत्रों की ओर जाती है। अत:, यह आवश्यक है कि जैसे-जैसे आर्थिक विकास बढ़े श्रम शक्ति का विभिन्न व्यवसायों के बीच श्रेष्ठतर बँटवारा हो। इससे केवल श्रम के उपयोग में ही सुधार नहीं आएगा, बल्कि अर्थव्यवस्था के उत्पादिता स्तर में भी वृद्धि होगी।

5.4.4 जनसंख्या वृद्धि

जनसंख्या में तीव्र वृद्धि आर्थिक विकास प्राप्त करने में एक बहुत बड़ी रुकावट मानी जाती है। तेज़ गति से जनसंख्या वृद्धि का अर्थ है प्रति व्यक्ति कम साधनों की उपलब्धता। क्योंकि आर्थिक संवृद्धि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि से मापी जाती है। इस प्रकार राष्ट्रीय आय का एक भाग तो बढ़ती हुए जनसंख्या के भरण-पोषण पर ही लग जाता है। अत: जनसंख्या द्वारा संवृद्धि की गति बढ़ाने की संभावनाएँ थोड़ी रह जाती हैं। स्पष्ट है कि बहुत बड़े और सक्रिय परिवार नियोजन कार्यक्रम की आवश्यकता है ताकि विकास प्रयत्नों के लाभ बेकार न जाएँ। यहाँ यह भी बताना आवश्यक है कि केवल जनसंख्या को अकेले ही दोषी मानना उचित नहीं होगा। इतिहास गवाह है कि जन्मदर में महत्त्वपूर्ण कमी उसी समय आती है जब अधिकतर जनसंख्या का जीवन स्तर बढ़े। आर्थिक विकास और जनसंख्या का आपस में संबंध है। यह सत्य है कि जनसंख्या आर्थिक विकास में रुकावट डालती है, लेकिन जब आर्थिक विकास गति पकड़ता है तो उससे स्वत: ही जनसंख्या नियंत्रण हेतु उचित वातावरण तैयार हो जाता है।

बोध प्रश्न 2

1) पूँजी-उत्पाद अनुपात को कौन से कारक प्रभावित करते हैं और कैसे? कोई से तीन कारकों की विवेचना कीजिए। (शब्द सीमा 100)

.....

.....

.....

.....

2) जैसे-जैसे एक अर्थव्यवस्था विकसित होती है कार्यशील जनसंख्या (यानि व्यावसायिक ढाँचा) इसके पक्ष में होता जाती है। निम्नलिखित में से सही विकल्प पर निशान (√) लगाइए :

क) प्राथमिक क्षेत्र

ख) द्वितीयक क्षेत्र

ग) तृतीयक क्षेत्र

घ) द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्र

ड़) प्राथमिक तथा द्वितीयक क्षेत्र

3) निम्नलिखित में से जीवन स्तर का कौन-सा बेहतर सूचक है?

क) राष्ट्रीय आय

ख) पूँजी निर्माण

ग) पूँजी-उत्पाद अनुपात

घ) जन्म के समय जीवन प्रत्याशा

ड़) उपरोक्त में से कोई भी नहीं।

4) निम्नलिखित में से कोन से वक्तव्य सही हैं और कौन से गलत?

क) ऊँची निवेश दर अर्थव्यवस्था के तीव्र संवृद्धि के लिए अच्छी नहीं होती। गलत/सही

ख) प्रति व्यक्ति आय में तीव्र वृद्धि के लिए जनसंख्या में वृद्धि होना अच्छा है। गलत/सही

ग) राष्ट्रीय आय में वृद्धि आर्थिक विकास का सबसे अच्छा सूचक है। गलत/सही

घ) राष्ट्रीय आय को जनसंख्या से भाग देने पर प्रतिव्यक्ति आय की गणना की जा सकती है। गलत/सही

5.5 भारत का अनुभव

इस भाग में हम भारत में संवृद्धि और विकास के प्रदर्शन और उसके मूल्यांकन के बारे में बात करेंगे। भारत के विकास का एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य राष्ट्रीय आय में वृद्धि को तेज़ करना है। राष्ट्रीय आय में वृद्धि के साथ-साथ हम प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि की प्रवृत्ति की भी जाँच करेंगे। पहले हम 1950 से लेकर अब तक राष्ट्रीय आय में प्रवृत्ति का अध्ययन करेंगे। इस हेतु हम साधन लागत पर निबल राष्ट्रीय उत्पाद के अनुमान लेते हैं। ये अनुमान निम्नलिखित तालिका में है :

तालिका 1: राष्ट्रीय आय (साधन लागत पर निबल राष्ट्रीय उत्पाद) में प्रवृत्ति (चालू व स्थिर कीमतों पर)

(करोड़ रुपये)

वर्ष	चालू कीमतों पर	स्थिर (1980-81) कीमतों पर
1950-51	8574	40454
1960-61	14242	58602
1970-71	36503	82211
1980-81	110685	110685
1990-91	418074	186446
1995-96	857570	267330
1999-2001	1590301	10,11,224*
2000-2001	1765238	10,63,479*

स्रोत : राष्ट्रीय लेखा साख्यिकी, सी.एस.ओ. 1997 और राष्ट्रीय लेखा साख्यिकी, 2001।

Note: * 1993-94 की कीमतों पर

तालिका-1 से पता चलता है कि 45 वर्ष की अवधि के दौरान भारत की (चालू कीमतों पर) राष्ट्रीय आय 8574 करोड़ रुपये से बढ़कर 857570 करोड़ रुपये यानि 100 गुना हो गई। यह वृद्धि प्रथम पंचवर्षीय योजना में उतनी नहीं थी जितनी कि आगे की योजनाओं में।

लेकिन चालू कीमतों पर राष्ट्रीय आय में वृद्धि से देश की आर्थिक संवृद्धि का सही-सही पता नहीं चल सकता क्योंकि इस वृद्धि में कीमतों में वृद्धि भी शामिल रहती है। सही अनुमान केवल स्थिर कीमतों पर राष्ट्रीय आय से लगाया जा सकता है क्योंकि इसमें कीमतों में वृद्धि शामिल नहीं होती। तालिका-1 से स्पष्ट है कि स्थिर कीमतों पर (यानि वास्तविक आय में) वृद्धि चालू कीमतों पर यानि मौद्रिक आय में वृद्धि की अपेक्षा बहुत कम है। वास्तविक आय में वृद्धि केवल 6 गुना है जबकि मौद्रिक आय में यह 100 गुना है। अत: मौद्रिक आय की अधिकतर वृद्धि मुद्रास्फीति यानि कीमतों में वृद्धि के कारण हुई।

तालिका 2 : प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय (साधन लागत पर निबल राष्ट्रीय उत्पाद) में प्रवृत्ति (चालू व स्थिर कीमतों पर)

वर्ष	चालू कीमतों पर (रुपये)	स्थिर कीमतों पर (रुपये) (1980-81 की कीमतों पर)
1950-51	238	1126
1960-61	328	1350
1970-71	674	1519
1980-81	1630	1630
1990-91	4983	2222
1995-96	9321	2573
1999-2000	16047	10204*
2000-2001	17530	10561*

स्रोत : राष्ट्रीय लेखा साख्यिकी, सी.एस.ओ. 1997 और राष्ट्रीय लेखा साख्यिकी, 2001।
Note:* 1993-94 की कीमतों पर

तालिका 2 में चालू व स्थिर कीमतों दोनों पर प्रतिव्यक्ति आय के आंकड़े दिए गए हैं। स्थिर कीमतों पर राष्ट्रीय आय का उद्देश्य कीमतों के प्रभाव को हटाना था। प्रतिव्यक्ति आय का उद्देश्य जनसंख्या वृद्धि के प्रभाव को हटाना है। स्थिर कीमतों पर प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि से हमें जीवन स्तर में सुधार के बारे में पता चलता है। 45 वर्ष की अवधि में हालाँकि चालू कीमतों पर प्रति व्यक्ति आय 38 गुना बढ़ी, स्थिर कीमतों पर यह केवल 2.3 गुना ही बढ़ी अर्थात् मौद्रिक आय में वृद्धि का अधिकतर भाग केवल कीमतों में वृद्धि के कारण ही बढ़ा।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि की दर में भी काफी भिन्नता रही है। आज़ादी के बाद के पचास वर्षों में भारत जैसी नियोजित अर्थव्यवस्था में इसकी संवृद्धि दर में काफी उतार-चढ़ाव आए। तालिका 3 से हमें इस प्रवृत्ति के बारे में पता चलता है।

इस तालिका से स्पष्ट है कि पिछले 50 वर्षों में वृद्धि दर में उतार-चढ़ाव आते रहे हैं। सातवीं पंचवर्षीय योजना में कुल व प्रति व्यक्ति आय दोनों की दर सबसे अधिक थी। चौथी योजना तक तो यह 4 प्रतिशत के आस-पास थी, लेकिन पाँचवीं योजना से इसमें कुछ तेजी आई और यह 5 प्रतिशत से ऊपर जाने लगी।

तालिका 3 : भारत में निवल राष्ट्रीय आय में वार्षिक औसत वृद्धि दर
(स्थर कीमतों 1980-81 की कीमतों पर)

	योजना अवधि	निबल राष्ट्रीय उत्पाद (प्रतिशत)	प्रतिव्यक्ति निबल (प्रतिशत)
प्रथम योजना	1951-56	3.6	1.7
द्वितीय योजना	1956-61	4.0	1.9
तृतीय योजना	1961-66	2.4	0.1
वार्षिक योजनाएँ	1966-69	3.7	1.4
चतुर्थ योजना	1969-74	3.3	0.9
पंचम योजना	1974-79	5.0	2.6
वार्षिक योजना	1979-80	- 6-0	- 8.2
छठी योजना	1980-85	5.4	3.2
सातवीं योजना	1985-90	5.9	3.6
वार्षिक योजना	1990-91	5.1	3.0
वार्षिक योजना	1991-92	- 0.1	- 2.1
वार्षिक योजना	1992-93	5.1	3.1
वार्षिक योजना	1993-94	5.9	4.1
वार्षिक योजना	1994-95	6.8	4.9
वार्षिक योजना	1995-96	6.9	5.1
वार्षिक योजना	1999-2000	6.6*	4.8*
वार्षिक योजना	2000-2001	5.2*	3.5*

स्रोत : राष्ट्रीय लेखा साख्यिकी, सी.एस.ओ. 1997 और राष्ट्रीय लेखा साख्यिकी, 2001।
Note: * 1993-94 की कीमतों पर

तालिका 4 : भारतीय अर्थव्यवस्था में सकल पूँजी निर्माण

वर्ष	निवेश दर (%)	सीमांत पूँजी उत्पाद अनुपात (ICOR)	सकल घरेलू उत्पाद वृद्धिदर
1951-52 से 55-56	10.66	2.95	3.61
1956-57 से 60-61	14.52	3.40	4.27
1960-61 से 65-66	15.45	5.44	2.84
1966-67 से 70-71	15.99	3.43	4.66
1971-72 से 75-76	17.87	5.80	3.08
1976-77 से 80-81	21.47	6.63	3.24
1981-82 से 85-86	20.98	4.15	5.06
1986-87 से 89-90	22.70	3.91	5.81
1989-90 से 91-92	23.17	4.36	5.31
1991-92 से 96-97	24.90	3.70	6.80
1997-2000	28.20	4.30	6.50

सूत्र रूप में

$$\text{निवेश दर } (I/Y) = \frac{\text{निवेश } (I)}{\text{सकल घरेलू उत्पाद } (Y)}$$

$$\text{सीमांत पूँजी उत्पाद (ICOR) अनुपात} = \frac{\text{पूँजी में परिवर्तन } (\Delta K)}{\text{सकल घरेलू उत्पाद में परिवर्तन } (\Delta Y)}$$

स्रोत : आठवीं योजना दस्तावेज़ (1992-97) और नवीं योजना दस्तावेज़ (1997-2002)

तालिका 4 से स्पष्ट है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में पूँजी निर्माण की दर (निवेश दर) स्वतंत्रता के बाद से निरंतर बढ़ रही है। 1951-52 से 1955-56 के बीच यह 10 प्रतिशत से ऊपर थी जो 1986-87 से 1991 के बीच यह बढ़कर 23 प्रतिशत हो गई और 1997-2000 में यह 28 प्रतिशत थी। यह एक बड़ी उपलब्धि रही है। लेकिन इसके साथ-साथ आय में वृद्धि की दर उतनी नहीं बढ़ी। तालिका 4 में हमने पूँजी-उत्पाद अनुपात न लेकर सीमांत पूँजी-उत्पाद अनुपात (incremental capital-output ratio) लिया है। ऐसा करने के दो कारण हैं : (i) पूँजी मापना एक बहुत कठिन कार्य है, तथा (ii) राष्ट्रीय आय में तुरंत वृद्धि सीमांत पूँजी (यानि निवेश) पर निर्भर करती है। आर्थिक विश्लेषण में भी पूँजी-उत्पाद अनुपात में उतार-चढ़ाव उसके पीछे विशेष कारण रहा है। इससे अर्थव्यवस्था में पूँजी उपयोग की कुशलता के स्तर में उतार-चढ़ाव के बारे में पता चलता है।

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि राष्ट्रीय आय व प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि विकास प्रक्रिया पर प्रकाश नहीं डालती है। आर्थिक विकास की प्रक्रिया का संबंध तो लोगों के जीवन स्तर से है, यानि क्या लोग दीर्घायु हो रहे हैं? क्या लोग बीमारी से बचे हैं? क्या वे वैज्ञानिक खोजों में लगे हैं? आदि आदि। आर्थिक विकास प्रक्रिया लोगों की क्षमता में वृद्धि लाने और अवसर बढ़ाने की प्रक्रिया है जिसके माध्यम से उनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार आता है।

उपरोक्त को ध्यान में रख हम कुछ सामाजिक सूचकों के बारे में बात करते हैं। तालिका-5 में मानव विकास के कुछ आधारभूत सूचक दिए गए हैं।

तालिका 5: मानव विकास के आधारभूत सूचक

वर्ष	जन्म के समय जीवन प्रत्याशा (वर्ष)	साक्षरता दर (प्रतिशत)	जन्मदर (प्रति हजार)	मृत्युदर (प्रति हजार)	शिशु मृत्युदर (प्रति हजार)
1951	32.1	18.3	39.9	27.4	146
1961	41.3	28.3	41.7	22.8	146
1971	45.6	34.5	36.9	14.9	129
1981	50.4	43.6	33.9	12.5	110
1991	59.4	52.2	29.5	9.8	80

स्रोत : भारत सरकार, आर्थिक समीक्षा 1996-97, वित्त मंत्रालय

जैसा कि तालिका-5 में देखा जा सकता है आर्थिक विकास के सभी सूचकों में सुधार आया है। 45 वर्षों में जन्म के समय जीवन प्रत्याशा 32.1 वर्ष से बढ़कर 59.4 वर्ष हो गई, साक्षरता दर लगभग तीन गुना हो गई, जन्मदर और मृत्युदर कम हो गई। जन्मदर की अपेक्षा मृत्युदर तेजी से गिरने के कारण जनसंख्या तेजी से बढ़ी। शिशु-मृत्युदर भी काफी गिर गई। 1991 में भारत के व्यावसायिक ढाँचे में 65 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या कृषि (यानि प्राथमिक क्षेत्र) में, लगभग 15 प्रतिशत उद्योग (यानि द्वितीयक क्षेत्र) में, तथा शेष (20 प्रतिशत) सेवा (यानि तृतीयक क्षेत्र) में लगी थी। इससे पता चलता है कि हमारे रोजगार का मुख्य साधन अभी भी कृषि है। द्वितीयक व तृतीयक क्षेत्र में अपेक्षाकृत बहुत कम अनुपात कार्यरत है। कृषि में आवश्यकता से अधिक अनुपात है। लेकिन कृषि का सकल उत्पाद में अनुपात जो कि स्वतंत्रता के समय 50 प्रतिशत था घटकर 1991 में 33 प्रतिशत रह गया।

व्यावसायिक ढाँचे के बारे में भारतीय अर्थव्यवस्था का अनुभव काफी निराशाजनक रहा है। इसके कारण कृषि क्षेत्र में अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा प्रतिव्यक्ति आय बहुत कम रही है। गैर-कृषि क्षेत्रों (यानि उद्योग व सेवा क्षेत्र) की प्रतिव्यक्ति आय कृषि क्षेत्र की प्रति व्यक्ति आय की अपेक्षा 2.3 गुना थी जो कि पिछले 50 वर्षों में बढ़कर 4 गुना हो गई थी। अत: भारतीय अर्थव्यवस्था के तेज विकास के लिए यह आवश्यक है कृषि के उत्पादिता स्तर में वृद्धि हो और गैर-कृषि कार्यों में श्रम-शक्ति का अधिक भाग लगे।

बोध प्रश्न 3

1) स्वतंत्रता के बाद से 'संवृद्धि' और 'विकास' में भारत का क्या अनुभव रहा है? 100 शब्दों में बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) खाली स्थान भरिए :

क) सकल राष्ट्रीय उत्पाद में कृषि का अनुपात 1950 में 50 प्रतिशत था जो घटकर 1991 में .... प्रतिशत हो गया

ख) पूँजी निर्माण को ..... भी कहते हैं।

ग) चालू कीमतों पर राष्ट्रीय आय में तेज वृद्धि ..... के कारण हैं।

3) भारत में साक्षरता दर बढ़कर रह गई है :

क) 99.1 प्रतिशत

ख) 52.4 प्रतिशत

ग) 45.7 प्रतिशत

घ) 23.5 प्रतिशत

ङ) उपरोक्त में से कोई भी नहीं।

4) भारत में जन्म के समय जीवन प्रत्याशा बढ़कर यह हो गई :

क) 99.1 वर्ष

ख) 23.5 वर्ष

ग) 45.7 वर्ष

घ) 59.4 वर्ष

ङ) उपरोक्त में से कोई भी नहीं।

5) भारत में शिशु मृत्युदर गिर कर यह हो गई :

क) 80

ख) 90

ग) 150

घ) 108

ङ) उपरोक्त में से कोई भी नहीं।

6) भारत में कृषि क्षेत्र पर निर्भर श्रमशक्ति का यह अनुपात है :

   क) एक-तिहाई

   ख) दो-तिहाई

   ग) आधा

   घ) तीन चौथाई

7) चालू कीमतों पर राष्ट्रीय आय स्थिर कीमतों पर राष्ट्रीय आय की अपेक्षा इन कारणों से अधिक रहती है :

   क) जनसंख्या वृद्धि

   ख) मुद्रास्फीति (यानि कीमतों में वृद्धि)

   ग) संवृद्धि दर की धीमी गति

   घ) अवस्फीति (यानि कीमतों में गिराव)

8) प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय में वृद्धि की अपेक्षा राष्ट्रीय आय की वृद्धि दर निम्नलिखित कारण से अधिक रही है :

   क) सकारात्मक जनसंख्या वृद्धि

   ख) मुद्रास्फीति (यानि कीमतों में वृद्धि)

   ग) संवृद्धि दर की गति धीमी होना

   घ) नकारात्मक जनसंख्या वृद्धि

9) पूँजी निर्माण दर बढ़कर यह हो गई है।

   क) 12 प्रतिशत

   ख) 15 प्रतिशत

   ग) 19 प्रतिशत

   घ) 23 प्रतिशत

   ङ) 35 प्रतिशत

5.6 सारांश

इस इकाई का उद्देश्य आर्थिक 'संवृद्धि' तथा आर्थिक 'विकास' की अवधारणाओं से परिचय कराना और इनके बीच अंतर बताना है। कई बार लोग इन दोनों अवधारणाओं को एक ही मानते हैं, जो कि ठीक नहीं है। आर्थिक 'संवृद्धि' की अपेक्षा आर्थिक 'विकास' की अवधारणा अधिक विस्तृत है।

इस इकाई में हमने संवृद्धि तथा विकास में भारत के अनुभव की बात भी की है। संक्षेप में, यह संभव है कि पूँजी-उत्पादन अनुपात में परिवर्तन लाकर राष्ट्रीय आय में वृद्धि लाई जा सके लेकिन इस प्रक्रिया में यह संभव है बेरोज़गारी की समस्या भयंकर रूप धारण कर ले। अत: महत्त्व की बात यह है कि निवेश का ढाँचा कुछ इस प्रकार का हो कि रक्षा साज-सामान, इंजीरियरिंग व धातु उद्योग, रेलवे, जहाज़रानी आदि उद्योगों में जटिल पूँजी-प्रधान प्रौद्योगिकी का प्रयोग हो, जबकि अधिकतर उपभोक्ता वस्तुएँ बनाने वाले व कृषि विकास कार्यक्रमों में श्रम-प्रधान प्रौद्योगिकी का प्रयोग हो जिनमें पूँजी कम लगती है। विकास के प्रारंभिक चरणों में ऐसा करना आवश्यक हो जाता है क्योंकि मृत्युदर घटने के कारण इस अवस्था में जनसंख्या का दबाव बढ़ता है। भारत जैसी विकाशील अर्थव्यवस्थाओं में यह आवश्यक है उत्पाद में वृद्धि और पूर्ण रोज़गार के उद्देश्यों के प्राप्ति के लिए एक साथ प्रयत्न किया जाए।

आजादी के बाद पिछले 50 वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था ने स्वयमेव धारणीय आर्थिक संवृद्धि (Self-sustained economic growth) है। 50 वर्षों के प्रयत्नों के बावजूद भारत की एक बहुत बड़ी संख्या, जो कि करोड़ों में है, अत्यंत गरीब है। विकास नीतियों में भारी परिवर्तन लाने की आवश्यकता है ताकि देश की गरीब जनसंख्या विकास प्रक्रिया से लाभ उठा सकें।

5.7 शब्दावली

आर्थिक संवृद्धि : आय या प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि।

आर्थिक विकास : जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने की प्रक्रिया।

प्रति व्यक्ति आय : कुल राष्ट्रीय आय को कुल जनसंख्या से भाग देने पर प्राप्त।

रुग्णता (Morbidity) : अस्वस्थता।

राष्ट्रीय आय : अर्थव्यवस्था में एक वर्ष में उत्पादित अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं का मौद्रिक मूल्य।

प्राथमिक क्षेत्र : कृषि और उससे संबंधित कार्य, वानिकी, मछली पालन आदि।

द्वितीयक : सभी प्रकार की विनिर्माण और निर्माण क्रियाएँ इसे उद्योगिक क्षेत्र भी कहते हैं।

तृतीयक क्षेत्र : सभी प्रकार के सेवा कार्य जैसे बैंकिंग, परिवहन, बीमा, प्रशासन, व्यापार आदि।

दुश्चक्र (Vicious Circle) : एक ऐसी स्थिति जिसमें कारक एक-दूसरे को कुछ इस प्रकार प्रभावित करते हैं कि पहले से खराब स्थिति और खराब होती चली जाती है।

5.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Central Statistical Organisation (1997) : "*National Accounts Statistics*", Department of Statistics, Ministry of Planning, Government of India.

Eswaran, Mukesh and Kotwal Ashok (1994) : "*Why Poverty Persists in India*" Oxford University Press, New Delhi Chapter 1, Pages 1-25.

Kapila U. (ed) (1996) : "*Indian Economy Since Independence 7th Edition*", Academic Foundation Delhi, Chapters 1-3, pages 25-45.

Meier, G.M. : "*Leading Issues in Economic Development*", Oxford University Press, Oxford, Fourth Edition, Chapter 1, 2, 3,

Todaro, Michal P. (1994) : "*Economic Developmet*", Longman Group UK limited, New York, Chapters 1,3, 4. Fifth Edition.

World Bank (1991) : "*World Development*", Oxford University Press, New York.

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) आर्थिक संवृद्धि से अभिप्राय राष्ट्रीय आय अथवा प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि से है। अधिक विवरण के लिए भाग 5.2 देखें।

2) आर्थिक संवृद्धि और सामाजिक परिवर्तन की मिली-जुली प्रक्रिया को आर्थिक विकास कहते हैं। आर्थिक संवृद्धि और आर्थिक विकास की अवधारणाओं के विवरण के लिए भाग 5.3 ध्यान से पढ़ें।

3) देखिए भाग 5.2 व 5.3

बोध प्रश्न 2

1) 1) अविभाज्यताएँ,

2) पूँजी गहनता,

3) श्रम गहनता,

4) प्रबंधन व प्रशासनिक कुशलता की गुणवत्ता, और

5) पूरक आर्थिक क्रियाएँ (विवरण के लिए उपभाग 5.4.3 देखें)

ये कारक पूँजी-उत्पादन अनुपात पर विभिन्न प्रकार से प्रभाव डालते हैं, कुछ सकारात्मक रूप से, कुछ नकारात्मक रूप से।

2) घ

3) घ

4) (क) गलत, (ख) गलत, (ग) गलत, (घ) सही

बोध प्रश्न 3

1) इस के उत्तर के लिए आप भाग 5.5 व 5.6 देखें और सभी तालिकाओं का अध्ययन करें। चर्चा राष्ट्रीय और प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि, पूँजी निर्माण, निवेश दर व सामाजिक सूचकों के रूप में हो।

2) (क) 33 (ख) निवेश (ग) मुद्रास्फीति (या कीमतों में वृद्धि)।

3) ख

4) घ

5) क

6) ख

7) ख

8) क

9) घ